ISSN - 2231-1130
वर्ष–सप्तम् ; सितम्बर–2016

समकालीन संदर्भो में गोस्वामी तुलसीदास की प्रासंगिकता

हरेराम पाण्डेय*

आधुनिक समय में गोस्वामी तुलसीदास का कृतित्व उनकी दूरदर्शिता और सामाजिक उपादेयता का निर्वहन कर रहा है। वर्तमान में जन मानस की जो जीवन शैली है वह वास्तव में यांत्रिकी, भौतिकी विचार दृष्टि की ओर उन्मुख है। आधुनिक जीवन शैली को यदि समझने का प्रयास करें तो निश्चित रूप से हमें संघर्ष, खीझ, ईर्ष्या, तनाव जैसे विकारों का द्वन्द्व दिखायी पड़ेगा, वास्तव में मनुष्य में अब मानवता नहीं रही, संबंधों में अब वह मिठास नहीं रही इसका एक बहुत बड़ा कारण पश्चिमी सभ्यता का अंधानुकरण करना है हम भारतीय संस्कृति और सभ्यता से जितना दूर होते जायेंगे उतना ही नैतिकता का ह्रास होता जायेगा। जब–जब समाज पतनोन्मुख होता रहा है तब–तब कवियों की लेखनी ने अपनी जिम्मेदारी निभाते हुए दिशा हीन हो रही सभ्यता को दिशा देने का प्रयास किया। अगर हम कबीर की बात करें या नानक, रैदास या जायसी और तुलसीदास की तो सदैव ही इन महान कवियों ने समरसता, सौहार्द, प्रेम की बात की है।

अद्यतन समय में गोस्वामी जी की महती आवश्यकता महसूस होती है। 'मानस' जैसे महत्वपूर्ण ग्रंथ की उपादेयता को समझने की आवश्यकता है मर्यादा पुरूषोत्तम श्री राम, आदर्श नारी की प्रतिमूर्ति सीता, भ्रातृप्रेम का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण भरत, धैर्य और शील की जीती जागती मूर्ति उर्मिला, प्रेम और कर्तव्यनिष्ठा के प्रति समर्पित लक्ष्मण, साहस के उन्नायक हनुमान आदि पौराणिक चरित्र और व्यक्तित्व हमें आज भी प्रेरित करते हैं।

तत्कालीन परिस्थितियों से उत्पन्न निराशा और व्याप्त दुर्व्यवस्था से भारतीय समाज को उबारने के लिए तुलसी ने पुरूषोत्तम श्रीराम, के आदर्श

* शोध छात्र– नेहरू ग्राम भारती विश्वविद्यालय, कोटवा जमुनीपुर, इलाहाबाद

एवं संघर्ष पूर्ण मर्यादित जीवन के माध्यम से जनमानस को ढाँढ़स बँधाने और उसके आत्म गौरव को पुनर्जीवित करने के लिए मानस की रचना की। विशेषता यह रही कि ऐसा उन्होनें आसन्न परिस्थितियों से निरपेक्ष रहकर किया, उनकी कृतियों में कहीं भी तत्कालीन शासन के प्रति कोई किसी प्रकार की खीझ अथवा आक्रोश नहीं है इसी कारण उनकी रचनाएँ अमर हैं। इस युग में गोस्वामी जी की प्रासंगिकता अक्षुण्ण है।

पौराणिक परम्परा के अन्य ग्रंथों की भाँति गोस्वामी जी के रामचरितमानस का विरोध करने वालों का कहना है कि मानस में सामाजिक दृष्टि का सर्वथा अभाव है, समाजवादियों का भी यही कहना है कि 'मानस' में 'समाजवाद' नहीं है अतः यह ग्रंथ भविष्य के लिए प्रासंगिक नहीं है ये सभी आरोप तुलसी को सम्प्रदायवादी सिद्ध करने के लिए अग्रसर हैं किंतु मात्र दो पंक्तियों में गोस्वामी तुलसीदास अपना ध्येय, अपना साध्य और उद्देश्य प्रस्तुत कर देते हैं –

''**परहित सरस धरम नहिं भाई।**
पर पीड़ा सम नहिं अधमाई।।''

तुलसी के लिए लोक मानस से बढ़कर न कोई धर्म है न जाति और न ही सम्प्रदाय। सेवा धर्म के सम्मुख तुलसी ने मोक्ष को भी व्याज्य माना है–

'सगुन उपासक संग तहँ रहहिं मोच्छ सब त्याग,
"सगुनोपासक मोच्छ न लेहीं।
तिन्ह कह राम भजति निज देहीं।।"

आदि उक्तियाँ मानस में यथास्थान प्राप्त होती हैं। तुलसी ने कभी भी भक्ति, साधना, प्रेम आदि भावों से इतर मानव शरीर की कल्पना भी नहीं की। उनकी प्राक्कल्पना में मनुष्य सभी धर्मों, वर्णों और जातियों से ऊपर है। उन्होनें मानवता को सभी धर्मों का मूल उपादेय सिद्ध किया इसके अलावा वर्णाश्रम पद्धति आदि का उल्लेख भी प्रसंगवश सामाजिक सरोकारों के संदर्भों के निमित्त किया। तुलसी की यह पंक्ति सामान्यतः समीक्षकों की दृष्टि में उन्हें

अहंवादी एवं संकुचित दृष्टिकोण वाला सिद्ध करने में लगी रहती है–

''ढ़ोल गँवार शूद्र पशु नारी!
सकल ताड़ना के अधिकारी।।''

जबकि किसी भी रूप में तुलसी की यह पंक्ति वर्णाश्रम पद्धति या स्त्रीवादी संकुचित दृष्टि की ओर नहीं इंगित करती बल्कि शब्द विशेष के संदर्भ में यदि समझने का प्रयत्न करें तो 'ताड़ना' शब्द ठेठ अवधी का शब्द है जहां इसका अभिप्राय 'देख–रेख' करने से सम्बन्धित है। इसी प्रकार कई पंक्तियों में शब्द भ्रांति को लेकर समीक्षकों ने अपने–अपने ढंग से अर्थ को व्याख्यायित करने का प्रयास किया है।

भावनाओं के साथ–साथ आज व्यक्ति का महत्त्व बढ़ा है लोकतंत्र में व्यक्ति की सत्ता सर्वोपरि है–वह व्यक्तिवाद की सीमा तक पहुँच गया है। गोस्वामी जी ने व्यक्ति की महिमा का ज्ञान अब से लगभग चार सौ वर्ष पूर्व किया था, जो युगीन सत्य है। तुलसी ने बार–बार लोकमंगल की बात कही है–

''मंगल करनि कलिमल हरनि
तुलसी कथा रघुनाथ की।''

लोकमंगल का यह रूप लोक के प्रति समर्पित होते हुए भी लोक के मातहत नहीं है। आधुनिकतम मनोविश्लेषक और काव्यशास्त्र के अध्येता यह स्वीकार करते हैं कि साहित्य आदि विशेष के और व्यक्तिपरक बोध पर आश्रित है साहित्य, संस्कृति, शिक्षा, धर्म आदि की अपील समूह से नहीं, व्यक्ति से की जाती है।

जिन युगीन संदर्भों में तुलसी ने राम राज्य की संकल्पना की थी उसी साम्यवाद का नारा आधुनिक समय में लोकतंत्र की पुकार बन गया है। तुलसी ने आदर्श कल्याणकारी राज्य की जो रूपरेखा प्रस्तुत की उसकी अगुआई आधुनिक भारत के शीर्षस्थ नेताओं ने की और उसी संकल्पना के आधार पर गाँधी जी ने भारत देश को रामराज्य बनाने पर बहुत अधिक बल दिया और ऐसे आदर्श रामराज्य की स्थापना से भला किसे विरोध हो सकता हैं –

'बयरू न कर काहु सन कोई।
राम प्रताप विषमता खोई।।
बरनाश्रम निज–निज धरम निरत वेद पथ लोग।
चलहिं सदा पावहिं सुखहिं नहिं भय सोक न रोग।।
दैहिक दैविक भौतिक तापा।
राम राज्य काहुहि नहिं व्यापा।।''

x x x x

''अल्प मृत्यु नहिं कवनिउ पीरा ।
सब सुन्दर सब विरूज सरीरा।।
नहिं दरिद्र कोउ दुखी न दीना।
नहिं कोउ अबुध लच्छन हीना।।
सब गुणज्ञ पंडित सब ज्ञानी।।
सब कृतज्ञ नहिं कपट सयानी।।''

संभव है कि तुलसी ने 'राम' को एक व्यक्ति से ऊपर एक संस्था, एक विचार के रूप में व्यक्त किया यह 'राम' रूपी विचार बहुत कुछ प्रगतिशील काव्यधारा की स्थापना में अग्रणी मार्क्सवाद एवं जनवाद जैसा ही रहा है। तुलसी लिखते हैं –

''नहिं दरिद्र सम दुःख जग माहीं।''

भीलनी शबरी के द्वार पर श्री राम का गमन, उसके द्वारा झूठे कर दिये गये बेरों को प्रेम सहित ग्रहण करना, शबरी का उत्साह और प्रेम देखते ही बनता है, वह श्रीराम को देखकर अवाक् और किंकर्त्तव्यविमूढ़ होकर कह उठती है–

''केहि विधि अस्तुति करौं तुम्हारी।''

आज भी भील, कोल, थारू, बिरसा, मुंडा आदि जनजातियाँ समाज की मुख्य धारा से जुड़ने के लिए निरंतर संघर्ष कर रही हैं और आधुनिक साहित्य की जनवादी चेतना इन्हीं हाशिए पर पड़े, दबे–कुचले दलितों की

उपेक्षा को साहित्य का मुख्य उद्देश्य बनाकर प्रस्तुत कर रही हैं। आधुनिक कवियों में निराला, दिनकर, नागार्जुन, त्रिलोचन आदि की काव्य पंक्तियाँ बेबाक रूप में अपनी वाणी को समाज के मुख्य हिस्से से जोड़ने का प्रयास करती हैं, नागार्जुन स्पष्ट कहते हैं–

''जनता मुझसे पूछ रही है क्या बतलाऊँ?
जनकवि हूँ मैं साफ कहूंगा क्यों हकलाऊँ?''

श्री राम के वनगमन के समय निषाद राज से मिलना, उन्हें ससम्मान गले लगाना, उनसे प्रेम पूर्वक मिलकर कुशलक्षेम पूछना ये सभी बातें कहीं न कहीं मानवतावादी दृष्टिकोण की परिचायक हैं। तुलसी ने तो निषाद को राम का सखा बताया है, रघुनाथ उन्हें अपने बराबर स्थान देते हैं और पूछते हैं–

''सहज सनेह बिबस रघुराई।
पूँछी कुसल निकट बैठाई।।''

भरत जैसे ही यह समाचार सुनते हैं कि श्रीराम निषादराज से मिल चुके हैं तो वह अपने रथ से शीघ्र ही उतर कर उन्हें अपने हृदय से लगा लेते हैं।

''करत दण्डवत् देखि तेहि भरत लीन्ह उर लाइ।''

तुलसी का जनवाद जाति, सम्प्रदाय आदि के नाम पर आरक्षण और विशेषाधिकारों की व्यवस्था भले न करता हो किन्तु व्यक्ति को उसके गुणों और उपलब्धियों से पहचानने की मान्यता देने वाला जनवाद यहां अवश्य है–

''कह रघुपति सुनु भामिन बाता।
मानहुँ एक भगति कर नाता।।
जाति–पाँति कुल धर्म बड़ाई।
धन–बल परिजन गुन चतुराई।।
भगतिहीन नर सोहइ ऐसा।
बिनु जल बारिद देखिय जैसा।।''

रामकथा में अयोध्या नरेश दशरथ एवं लंकाधिपति रावण के माध्यम से सामंती व्यवस्था को पूरे आयाम में प्रस्तुत किया गया है, उसके अर्न्तगत भारत के मध्य युग के लोक जीवन अथवा जन–जीवन की सच्ची मार्मिक गाथा की धारा भी समान्तर बहती है।

'कवितावली' में वे तत्कालीन युग की विसंगतियों का चित्रण करते हुए कहते हैं–

''खेती न किसान को भिखारी को न भीख भली,
बनिक को बनिज न चाकर को चाकरी।
जीविका विहीन लोग सीद्यमान सोच बस,
कहँ एक एकन सो कहाँ जाइ का करी।।''

तुलसी ने तीन ऐसे कार्य किए जिनके कारण वह युग द्रष्टा, युग सृष्टा कवि के रूप में तो जाने ही जाएंगे, बल्कि वे अजर–अमर भी बने रहेंगे यथा आदर्श गार्हस्थ काव्य का सृजन करके आदर्श सनातन सामाजिक भूमिका का निर्माण, जाति–वर्ण निरपेक्ष आस्तिक मानववाद की अभिव्यक्ति तथा रामचरितमानस के माध्यम से भक्ति का प्रशिक्षण करना और समूह मन एवं व्यक्ति मन को कुंठारहित और निरूज करना।

मानस में वर्णित शासनतंत्र अपने युग की परम्परा के अनुसार राजतंत्र कोटि का है जिसमें राज्य वंशानुगत होता है, परन्तु तुलसी का राजतंत्र निरंकुश राजतंत्र नहीं है उस पर जनमत का अंकुश सदैव रहता है यह सर्वोपरि है राजा दशरथ अपने ज्येष्ठ, योग्यतम पुत्र राम को युवराज पद पर अभिषिक्त करना चाहते हैं और ऐसा करने का उन्हें अधिकार भी प्राप्त है, परन्तु इसके लिए लोकमत की स्वीकृति आवश्यक है–

''जो पाँचे मत लागै नीका।
करहु हरषि हिय रामहि टीका।।''

अतः तुलसी के शासनतंत्र में 'टाल्स्टॉय' और गांधी' के Trusteeship सिद्धान्त की पूर्वपीठिका व्याप्त है–

''मुखिया मुख सों चाहिए खान पान को एक।
पालै पोसै सकल अँग तुलसी सहित विवेक।।''

तुलसी का काव्य सच्चे अर्थों में मानव जीवन की गाथा है उसमें मानव जीवन अपनी सम्पूर्ण विविधता और विराटता के साथ अंकित हुआ है उसका मुख्य सन्देश है– लोक–उद्धारक राम बनो, लोक–शोषक उत्पीड़क रावण को मारो तुलसी काव्य के प्रति श्रद्धा या अनुराग का अर्थ, धर्म या इतिहास की अंधभक्ति नहीं है, अपितु मानव के प्रति अटूट अनुराग और आस्था का प्रतीक है। तुलसी के मानस की भूमिका किसी भी सामाजिक–राजनीतिक व्यवस्था में परिवार और गार्हस्थ जीवन के सन्दर्भ में सदैव मूल्यवान रहेगीं।

अन्त में कहा जा सकता है कि तुलसी जो व्यवस्था देना चाहते हैं उसमें साधुमत, लोकमत, नृपनय तथा वेद ज्ञान का सम्यक् सामंजस्य है।

''भरत विनय सादर सुनिय करिय विचारू बहोरि।
करब साधुमत, लोकमत, नृपनय निगम निचोरि।।''

साधु मतानुसार लोकमत का सृजन हो, उसी परिप्रेक्ष्य में राजनीति के स्वरूप का निर्धारण–संविधान का पालन करते हुए होना चाहिए निश्चित रूप से तुलसी का मानस और उनकी प्रासंगिकता ही उनके सन्देश को सत्यम्–शिवम् तथा सुन्दरम् बनाती है।

सहायक संदर्भ सूची –

मौलिक ग्रंथ –

1. रामचरितमानस, उत्तरकाण्ड : गोस्वामी तुलसीदास
2. कवितावली : गोस्वामी तुलसीदास
3. विनयपत्रिका : गोस्वामी तुलसीदास

अन्य संदर्भ –

1. तुलसी की साहित्य साधना : डॉ0 लल्लन राय, वाणी प्रकाशन, पृ0सं0–122
2. तुलसीदास एवं उनका युग : डॉ0 राजपति दीक्षित, ज्ञान मण्डल लिमिटेड

वाराणसी–पृ0सं0–59

3. जन–जन के कवि तुलसीदास : योगेन्द्र प्रताप सिंह, वाणी प्रकाशन– पृ0सं0–79
4. विश्व कवि तुलसी और उनका काव्य : रामप्रसाद मिश्र, सुमितप्रकाशन– पृ0सं0–119
5. गोस्वामी तुलसीदास : रामचन्द्र शुक्ल, लोकभारती प्रकाशन, पृ0स0–140
6. लोकवादी तुलसीदास : विश्वनाथ त्रिपाठी, अभिव्यक्ति प्रकाशन– पृ0सं0–72
7. गोसांई तुलसीदास : विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, अभिव्यक्ति प्रकाशन– पृ0सं0–81
8. तुलसी आधुनिक वातायन से : रमेश कुंतल मेघ– लोकभारती प्रकाशन– पृ0सं0–92
9. तुलसीदास : उदयभानु सिंह, वाणी प्रकाशन– पृ0सं0–91
10. रामकथा और तुलसी : कामिक बुल्के, प्रभात पब्लिकेशन्स– पृ0सं0–05